सर्वेश्वर का काव्य-लोक

डॉ. भानुभाई के. रोहित
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
ईडर आर्ट्स एण्ड कोमर्स कोलेज,
ईडर, जी. साबरकांठा

सर्वेश्वर की काव्य-कृतियों का संक्षिप्त परिचय :

हिन्दी की नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षरों में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का नाम एक विशेष आदरभाव के साथ लिया जाता है | नई कविता को एक नई दिशा, एक नया अंदाज देते हुए नई कविता की एक विशिष्ट पहचान बनाने में सर्वेश्वर का उल्लेखनीय योगदान रहा है | कविता को सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति बतलाते हुए उन्होंने उसे नई संवेदना, नवीं मूल्यों, नवीं जीवन- परिवेश से जोड़ते हुए एक नवीं शिल्प-सज्जा प्रदान की | जर्जर रुढियों से कविता को मुक्ति दिलाने का प्रयत्न करते हुए जीवन से उसका सीधा साक्षात्कार कराया | उनकी काव्य-कृतियों में इस तथ्य के संकेत जगह-जगह पर मिलते हैं | उनकी प्रमुख काव्य-कृतियाँ ईस प्रकार है :

१. काठ की घंटियां :

सर्वेश्वर की काव्य-यात्रा सन् १९५० के आसपास आरंभ हुई | 'तीसरे- सप्तक' में उनकी रचनाएं जब प्रकाश में आयीं तो एक नये कवि के रूप में उनका चेहरा पाठकों के समक्ष उजागर हुआ | सन् १९५१ में उनका प्रथम काव्य संग्रह 'काठ की घंटियां' प्रकाशित हुआ जिसमे तीसरा सप्तक की अधिकांश कविताएँ समा ली गयी हैं | प्रस्तुत संग्रह में कवि की ७१ रचनाओं का संकलन है | इसी संकलन में शेष पृष्ठों पर सर्वेश्वर जी की बीस कहानियां और 'सोया हुआ जल' नामक एक लघु उपन्यास भी संकलित है | अत: प्रस्तुत रचना सर्वेश्वर को कवि और कथाकार दोनों रूपों में सामने लाती है | प्रस्तुत संकलन की रचनाओं में परिस्थितियों के प्रति विद्रोह और व्यंग्य का भाव है, परिवर्तन की व्याकुलता है | वे बाहय परिवर्तन से संतुष्ट नहि दिखलाई देते, वे 'भितर से बदलाव' चाहते हैं | 'काठ की घंटियां' में संकलित कविताओं का स्वरवैविध्यपूर्ण है | इन रचनाओं में मानवीय प्रेम, वेदना, निराशा, अवसाद, अकेलापन आदि भावों की अभिव्यक्ति है | सौंदर्यानुभूति का वर्णन है | कवि की अपनी वेदना सामाजिक वेदना का पर्याय बनकर प्रकट होती है | कवि की संवेदना जन-जीवन की व्यथा, सामाजिक विसंगतियों से सीधे जुड़ती है और उसका यथार्त चित्र अंकित करती है | सामाजिक विसंगतियों के प्रति अपना आक्रोश प्रकट करता हुआ कवि कहता है -

"सुनो अब जिया जाता नहीं
नित्य के इस स्वांग से मैं थक गया हूँ |

हो सके तो बीएस करो / सांस मेरी घुट रही है |
कहो तो चेहरे लगाना छोड़ दूं
अभी कब तक चलेगा अभिनय तुम्हारा ?"

काठ की घंटियों में पीड़ा, निराशा और अवसाद की असरकारक अभिव्यक्ति है | दर्द विभिन्न भंगिमाएं सी संग्रह की रचनाओं में देखि जा सकती हैं | अभावजन्द दर्द और कुंठा की अभिव्यक्ति निम्न पंक्ति में इस प्रकार हुई है -

"बोलना चाहता है, अपनी ही पग ध्वनिसे बोल
दर्द की गांठतू अपने ही छालों पर खोल |"

कवि का दर्द उठला नहीं, गहरा है, दर्द के महासागर से घिर क्र अकेलेपन के अवसर से पीड़ित कवि कराह उठता है -

"दर्द के इस महासागर से कहो,
सामने मेरे न चीखे / मैं अकेला हूं |"

सर्वेश्वर ने अपने निजी दर्द को सामाजिक संदर्भ में देखा है और बड़ी ईमानदारी से उसे अभिव्यक्त किया है | कवि का दर्द आम आदमी का दर्द है, उस आम आदमी का जो वर्तमान व्यवस्था से त्रस्त है किंतु कुछ भी क्र पाने में असमर्थ

'काठ की घंटियां' में दर्द के साथ-साथ प्रेम का उल्लास भी है | रोमानी भाव बोध की सुंदर अभिव्यक्ति भी है | 'सुहागिन का गीत' और 'यह भी क्या रात' इसी भाव बोध की कविताएं हैं | लोकजीवन के रंग भी इस संग्रह की रचनाओं में बिखरे हुए देखे जा सकते हैं | नई कविता में लोक जीवन के प्रति जो ललक और लगाव है, लोक भाषा के प्रति जो आकर्षण है वः उपर्युक्त संग्रह की अनेक रचनाओं में देखा जा सकता हैं | 'बंजारे का गीत', भीलो का गीत', 'सावन का गीत' आदि में यह सब स्वयं स्पष्ट है | बयार की सर-सर, धानी आंचल की फर-फर, चूड़ियों की खनक में प्रकृति की सुंदरता के साथ-साथ लोक जीवन के उल्लास की सहज अभिव्यक्ति है | 'कलाकार और सिपाही' तथा 'पोस्टर और आदमी' जैसी रचनाओं में सामाजिक यथार्थ की व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति भी उतनी ही सशक्त है | उनका व्यंग्य तीखा और उतेजक होता है | कवि के इस प्रथम काव्य संग्रह में ही अनेक उपलब्धियों के साथ-साथ संभावनाओं के संकेत प्राप्त होते हैं |

(२) बांस का पुल :

'बांस का पुल' कवि की काव्य-यात्रा का दूसरा सोपान है जिसमें कवि की चेतना और अभिव्यक्ति दोनों में निखार आया है | इस संग्रह में भी प्रेम, प्रकृति, वेदना, हताशा और अकेलेपन के भावों की अभिव्यक्ति है | यहाँ इन समस्त भावों की अभिव्यक्ति मध्यमवर्गीय समाज के संदर्भ में हुई है | मध्यमवर्गीय व्यक्ति भी वेदना और विडंबना यहां केंद्र में है | ,बांस का पुल' उस व्यक्ति का प्रतीक माना जा सकता है जो लचकता, झुकता, चरमराता हुआ भी संघर्ष करने की अटूट क्षमता रखता है | इस पार से उस पार जाने की प्रेरणा देता हुआ दो

बिन्दुओं को जोड़ने का संकेत देता है | मध्यमवर्गीय व्यक्ति की मजबूरियों का चित्रं निम्न रचना में हुआ है -

"भीड़ में अकेला यदि खड़ा रहा / सब अपनी राह गये ?
कोई मेरे लिये रुका नहि / किसी ने हाथ नहीं गहा
टूटे मेरे वायलिन-सा एक कोने में पड़ा,
बजता साज सुनता रहा |
अपने मन के अथाह सूनेपन में
मकड़ी का जाल बुनता रहा |"[१]

आत्म निर्वासन की स्थिति से भी कवि टकराया है और इस बात का सहज स्वीकार भी उसने किया है - 'कभी -कभी ऐसा लगता है की मुझे मेरे शरीर से अलग कहीं प्रतिष्ठित कर दिया गया है | मैं अपने ही तन से निर्वासित हूँ |'

प्रस्तुत संग्रह की रचनाओं में जीवन की विविध विसंगतियों, आशंका, अविश्वास, भी, संत्रास, थकान आदि का यथार्थ चित्रं हुआ है | 'कैसी विचित्र है यह जिंदगी' नामक रचना में जीवन की अव्यवस्था से उत्पन्न वेदनापूर्ण स्थितियों का व्यंग्यात्मक चित्रं है -

"कैसी विचित्र है यह जिंदगी जिसे में जीतै हूँ |
एक सड़ाकपड़ा जो फटता जाता है, ज्यों-ज्यों सीता हूँ |
एक लबांदा जिसे हर बार ओंढने पर
थर्राता हूँ, फिर भी ओंढता हूँ |"[२]

'सड़ा कपड़ा' जीवनकी छिन्न-भिन्न का प्रतीक है और 'लबांदा' जीवन की भार स्वरूप अस्तव्यस्त का | इन रचनाओं का शिल्प अपने आप में सुगठित है | सर्वेश्वर इस अव्यवस्था के बिच व्यवस्था की खोज करना चाहते हैं | 'अब भी में जिंदगी का गीत गाना चाहता हूँ |' में कवि के इसी आस्थावादी स्वर की अभिव्यक्ति है | संकलन की अनेक कविताओं में प्रकृति की विविध छाया का चित्रं हुआ है | 'बसंत स्मृति', 'बाढ़', 'सूरज', 'हेमंत की संध्या', 'वसंत की शाम' तथा 'सांझ एक चित्र' आदि में प्रकृति के माध्यम से कवि विविध मन: स्थितियों की ओर संकेत किया है | कवि ने ग्राम जोवन पर छापी जा रही शहरी सभ्यता के प्रति सतर्क रहने का संकेत भी दिया है | 'यहीं कहीं एक कच्ची सड़क थी | जो मेरे गाँव जाती थी |' में इसी बात की ओर अंगुलि निर्देश है |

(३) एक सूनी नाव :

'एक सूनी नाव' सर्वेश्वर का तीसरा काव्य संग्रह है | सर्वेश्वर के काव्य संग्रहों के शीर्षक प्रतीकात्मक स्तर पर किसी न किसी संकेत को सामने लाते हैं | 'सूनी नाव' अकेलेपन का प्रतीक मानी जा सकती है | नाव सूनी है लेकिन उसकी अपनी पहचान है, सार्थकता है | अकेलेपन के बावजूद व्यक्ति अपने को अर्थहीन नहीं समजता | वः अपनी यात्रा स्वयं पूरी करता है | 'एक सूनी नाव' का कवि अपने एकांत से न तो ऊबा हुआ है और नहि भयभीत है | न हताश है न

निराश | उसकी आस्था जरा भी डगमगाती नहीं | अपने निकट अकेलेपन में भी वह दूर तक थाह लेने में सक्षम है | निम्न पंक्तियां देखि जा सकती
हैं -

"मेरा एकांत ही मेरा विजय स्थल है
जहाँ में हर दौड़ के बाद
गर्व से जाकर खड़ा हो जाता हूँ |"

'एक सूनी नाव' की कविताओं में व्यक्त दर्द कवि को थकाता नहीं, उसे शक्ति और संवेदना प्रदान करता है | अकेले तट पर सूनी नाव में बैठ-बैठ ही उसने दुनिया के दू:ख-दर्द की अनेक तस्वीरें लि हैं | अनुभवों ने उसकी आस्था को और अधिक दृढ़ बनाया है | उसका कहना है-

'अपने पर मेरी आस्था | इतनी छोटी नहीं है कि -
वह इश्वर के कंधो पर बैठ कर ही
इन पहाडियों के पार देख सके |'[३]

संकलन की कुछ रचनाओं पर अस्तित्ववादी दृष्टि का प्रभाव भी है | संकलन की डॉ महत्वपूर्ण रचनाएं हैं 'इस मृत नगर में' और 'युद्ध स्थिति' | युद्ध स्थिति में मानवीय जिजीविषा का चित्रण है | युद्ध के एक रचनात्मक प्रयोजन की ओर कवि संकेत करता है -

"एक युद्ध मैं हर क्षण अपने भीतर लड़ता हूँ |
धरती को बड़ा करने के लिए और दृश्यों को सुंदर |
सौंदर्य को उदार करने के लिए और आस्थाओं को समुंदर |
कामनाओं को फूलो से भरने के लिए |"

'इस मृत नगर में' कवि ने संसार को मृत नगर माना है | सर्वत्र सम्बंध, मूल्य आदि टूट रहे हैं, मर रहे हैं | हर चीज, हर स्थिति को कवि ने मृतधर्मा माना है | वस्तुस्थिति का यथार्थ चित्रण इस कवितामे हुआ है | समकालीन संदर्भो का चित्र अंकित करने में कवि को अच्छी सफलता मिली है, प्रस्तुत संग्रह में |

(४) गर्म हवाएँ :

१९६१ में प्रकाशित 'गर्म हवाएँ' सर्वेश्वर की काव्ययात्रा का चौथा सोपान है | इस संग्रह तक आते-आते कवि ने और अधिक व्यापक धरातल पर संचरण किया है | उसकी भाषा और शैली दोंनों में एक नया मिजाज दिखलाई देता है | समाज, राजनीति, राष्ट्र, लोकतंत्र, गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, मूल्यहास आदि सभी कुछ उसके मन को झकझोरता हुआ दिखलाई देता है | मूल्यों का विघटन उसे सविशेष प्रभावित करता दिखलाई देता है | आजादी के बाद के वर्षों में मूल्यों के विघटन के कारण देश की प्रगति की रफ्तार बहुत धीमी रही | सर्वत्र एक सडांध-सी फ़ैल रही है-

"धीरे-धीरे एक क्रांति-यात्रा
शांति यात्रा में बदल रही है |
सड़ांध फ़ैल रही है -
नक्शे पर देश के और आँखों में प्यार के
सीमांत धुंधले पड़ते जा रहे हैं
और हम चूहों से देख रहे हैं |"

देश की वर्तमान स्थिति को देख क्र कवि इसी निष्कर्ष पर पहुंचता है कि -

'धीरे-धीरे कुछ नहीं होता | सिर्फ मौत होती है |'
'धीरे-धीरे कुछ नहीं आता | सिर्फ मौत आती है |'

कवि की संवेदना उस समय आक्रोशपूर्ण हो उठती है जब वः देखता है -

"यह बंध कमरा
सलामी मंच है
जहां मैं खड़ा हूं -
पचास करोड़ आदमी खाली पेट बजाते हुए ठठरियां खड़खड़ाते
हर क्षण मेरे सामने से गुजर जाते हैं |"

दूसरी तरफ वः देखता है की -

"झांकियां निकलती हैं | ढोंग की, विश्वासघात की
बदबू आती है हर बार | एक मरी हुई बात की |"

इस संग्रह की कुछ रचनाओं में वैयक्तिकता का स्पर्श भी है | ये कविताएं कवि के 'स्वत्व' की अभिव्यक्ति बन कर आती हैं | स्वर्गीय पत्नी के नाम लिखी गई कविताएं 'सूखा' और 'पत्नी की मृत्यु पर' में कवि के दर्द की सार्थक अभिव्यक्ति है | 'प्रार्थना' शीर्षक से सम्बद्धकविताओं में कवि अपने भीतर की शक्ति को बढ़ाना चाहता है | आत्मशक्ति का प्रकाश पाने को आकुल-व्याकुल कवि की आस्था और जिजीविषा की इनमें सुंदर अभिव्यक्ति है |अपने खोये हुए 'स्व' की तलाश इन कविताओं में प्रमुख हो उठी है | प्रस्तुत संग्रह में प्रकृति-संवेदना से सम्बद्ध कुछ बिम्ब बड़े आकर्षक हैं | 'शाम: एक किसान' नामक कविता का बिम्बविधान दर्शनीय है -

"आकाश का साफा बांधकर
सूरज की चिलम खींचता बैठा है पहाड़ |
पास ही धक रही है, पलाश के जंगल की अंगीठी
अंधकार दूर पूर्व में सिमटा बैठा हैभेड़ों के गल्ले-सा |"

'वसंत के नाम एक खुला पत्र', 'रेत की नदी' तथा 'वसंत की चांदनी' नामक रचनाओं में प्रकृति के बड़े सजीव-सार्थक बिंब हैं | इसप्रकार प्रस्तुत संग्रह में कवि की संवेदना के विस्तृत दायरे का परिचय मिलता है | समकालीन परिवेश के प्रति की सजगता बढ़ी है | शब्दों में निखर आया है, बिम्बों में ताजगी आई है |

(५) कुआनो नदी :

'कुआनो नदी' में संकलित कविताएं ग्राम्यसंस्कृति और नगर संस्कृति की टकराहट को ध्वनित करने वाली कविताएं हैं | संग्रह की १७ कविताओं में से 'कुआनो नदी' सर्वाधिक सशक्त रचना है | ग्रामीण और शहरी परिवेश से संबंधित अनेक समस्याएं इसमें उभर कर ए हैं | 'कुआनो नदी' तिन खंडो में विभक्त एक लम्बी रचना है | हिन्दी की लम्बी कविताओं की परंपरा में इसका महत्वपूर्ण स्थान है | कविता के तीन खंड हैं - कुआनो नदी, कुआनो नदी के पार और कुआनो नदी: खतरे का निशान | कुआनों नदी का अर्थ है - कुएं से निकली नदी - संकेतित है | वास्तव में कुएं से कोई नदी नहीं निकलती और यदि ऐसा हो भी तो यह कहना होगा की वह जहाँ से निकलती है वहीं समाप्त हो जाती है | यदि इसे ग्राम्य संस्कृति का प्रतीक मानें तो यह संकेत मिलता है की ग्राम्य संस्कृति अपनी जगह पर ही स्थिर है, आगे नहीं बढ़ती - आजादी के कई वेर्षों के बाद भी उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया | कविता के निम्न शब्द इसी बात को ध्वनित करते हैं -

"यह नदी कगारें नहीं काटती,
अपना पात नहीं बदलती है |
जैसे बहती थी वैसे बहती है |"[४]

कुआनो नदी का प्रतीक भारतीय ग्राम्य जीवन की संवेदना और उससे संबद्ध सभ्यता-संस्कृति, उस संस्कृति से जुड़े जन-जीवन की व्यथा आदि का निरूपण किया गया है | इस संग्रह की कविताओं में लोंगो की व्यथा-कथा है जो मूलत: गाँव से जुड़े हैं किंतु शहर में रहने के लिए विवश हैं | अत: गांव को न तो भूल पाते हैं और न शहर से जुड़ पाते हैं | एक ओर गांव की संस्कृति उनके मन में बसी हुई है, दूसरी ओर शहर की भीड़ और तनाव उन्हें त्रस्त करता है | यही कारण है कि कवि को गांव में बहने वाली कुआनो नदी दिल्ली की सड़को पर भी दिखाई देती है | कुआनो गांव में भी है और शहर में भी किंतु दोंनो की संस्कृतियां अलग-अलग हैं | शहर की कुआनो नदी आसपास अमानवीयता का क्रूर व्यापार चलरहा है -

"धुप में शहर की गंदगी यहाँ साफ़ होती है |
धोबी कपड़े धोते हैं
आवारा औरतें सिगरेट पीती | गुनगुनाती - लिपटती
अपने ग्राहकों के साथ घूमती हैं
रात में अक्सर कत्ल होते हैं |
किसी स्त्री का फेंका हुआ बच्चा
कभी ज़िंदा | कभी मरा मिल जाता है |"[५]

इस प्रकार कवि की संवेदना में दोंनो यथार्थ परस्पर टकराते हैं | मध्यमवर्गीय जीवन के अनेक विध जटिल अनुभवों को कवि ने विभिन्न प्रतिको और बिम्बों के माध्यम से इस कविता में अभिव्यक्त किया है | अमानवीय राजनीति का पर्दाफाश भी इस संग्रह की कविताओं में कवि

ने किया है | संग्रह की सशक्त कविता 'गरीबी हटाओ' वर्तमान प्रशासन पर तीखा व्यंग्य है जिसमें 'गरीबी हटाओ' का नारा लगाया जा रहा है किंतु हटाए जा रहे हैं गरीब | राजनीति कितनी गिर चुकी है -

"गरीबी हटाओ सुनते ही | वे कब्रिस्तानों की ओर लपके |
और मुर्दों पर पड़ी चादरे उतारने लगे |
गरीबी हटाओ सुनते ही | उन्होंने एक बूढ़े आदमी को पकड़ लिया
जो उधर से गुजर रहा था |
गरीबी हटाओ सुनते ही | वे हर घायल कान को -
अपनी जबान से चाटने लगे |"[६]

भारतीय प्रशासन की जड़ता का पर्दाफाश बड़ी बेरहमी के साथ किया गया है |

(६) जंगल का दर्द :

जंगल का दर्द (१९७६) सर्वेश्वर की काव्य-यात्रा का नवीनतम उपलब्धि है | जंगल का दर्द की कविताएं कवि के उस संघर्ष की कविताएं जो भीतरी और बाहय दोंनो स्तरों पर किये जा रहे संघर्ष का परिणाम हैं | कुतों, चीतों, भेदियों, तेंदुओं, तितलियों आदि से भरे जंगल में कवि सभी से मिलता-टकराता है और अपना रास्ता खोज निकालता है | वह कहीं - न - कहीं से मूल्यों को तलाश लेता है | हर जगह संभावनाओं के द्वार उसे खुलते दिखाई देते हैं -

"संभावनाएं निरंतर हैं | जिंदगी की खोज जो रचना है |
रचना जो सार्थक करती है |"[७]

'जंगल का दर्द' ई रचनाओं में एक ओर जीवन-मूल्यों का विध्वंश करने वाली शासन-व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश व्यक्त किया गया है, दूसरी ओर उन्हीं पतनोन्मुखी मूल्यों में से नये मूल्यों की संभावनाओं की तलाश की गई है | जनचेतना की अभिव्यक्ति इस संदृढ़ में अनेक प्रतीकों-बिम्बों के माध्यम से हुई है | कवि यह देखता है, अनुभव करता है कि हर चेहरे पर दर्द की छाया है, हर आँख में पीड़ा है, हर दिल में व्यवस्था के प्रति आक्रोश है, धृणा है | हर व्यक्ति के भीतर एक आग है जो अव्यवस्था को निगल जाना चाहती है | कवि जन चेना को वोद्रोह की आग के रूप देखना चाहता है | आग, ताप, मशाल, भेडिये आदि बिम्बों-प्रतीकों के माध्यम से उसने जन-जीवन के दर्द की अभिव्यक्ति की है | कल तक अपनी अनन्य शक्ति से अपरिचित व्यक्ति आज स्लेट पर खड़िया से आग लिखता नजर आता है -

"मैंने देखा स्लेट पर चलती उनकी उंगलियां
लौ में बदल रही हैं |
और पूरा शब्द लिखते ही -
उनका हाथ मशाल में बदल जाता है |"[८]

मशाल, लौ आदि बिम्बों में परिवर्तन के संकेत हैं | कवि की प्रजातंत्र पिघलता नजर आता है, शब्द अंगारों से धधकते नजर आते हैं और स्थितियां रणक्षेत्र में परिणित होती दिखलाई देती हैं -

"शब्द जिन्हें में बर्फ की सिल्लियो पर भी
अकेली चींटी सा चला ले जाता था
अब अंगारों से धधक रहे हैं |
उनसे मैं खेल नहीं सकता | वे युद्ध भूमि में बदल गये हैं |

पूंजीवादी शोषण और क्रूर राजनीति के प्रति सर्वहारा के विद्रोह की आग का संकेत यहाँ स्वयं स्पष्ट है | 'आग लगा देंगे आग' की सामूहिक घोषणा 'आग' कविता की चरम परिणति है | कवि शोषित पीड़ित जन-समुदाय में आग जगाने को तत्पर दिखाई देता है | आम आदमी के प्रति कवि की प्रतिबद्धता स्वयं स्पष्ट है | आपातकाल (इमरजंसी) के दौरान लिखी गयी सर्वेश्वर की कविताएं लोकतंत्र के प्रति उनकी पक्षधरता की प्रतीक हैं | फूलों के रंग उन्हें आग में बदलते दिखाई देते हैं | 'भेदियें' - १-२-३ कविताएं सताधीशों के के भेड़ियेपन के प्रति तीखा आक्रोश और व्यंग्य है | इतिहास के जंगल में नये-नये जन्म लेने वाले भेडियों को पहचानना बहुत जरूरी है | उन्हें जलाने के लिए मशाल लेकर निकलना भी उतना ही जरूरी है | कवि की क्रांतिधर्मा चेतना इन पंक्तियों में प्रकट हुई है -

"भेड़िया गुर्राता है | तुम मशाल जलाओं
उसमें और तुममें यही बुनियादी फर्क है
भेड़िया मशाल नहीं जला सकता
अब तुम मशाल उठा भेडियों के करीब जाओं
भेड़िया भागेगा | करोड़ों हाथों में मशाल लेकर
एक-एक झाड़ी की ओर बढो | सब भेड़िये भागेंगे |"[९]

'तेंदुआ' शीर्षक कविता भी इसी प्रकार प्रशासकों की सताप्रियता, मदांधता, चिपकूपन तथा उनके कुकर्मो के प्रति एक तीखा व्यंग्य है | प्रशासक अपने काले कारनामों द्वारा समग्र परिवेश को गंदा और भ्रष्ट बना रहे हैं | कवि कहता है -

"एक तेंदुआ | सारे जंगल को
काले तेंदुए में बदल रहा हैं |"[१०]

इस प्रकार 'जंगल का दर्द' कविता में कवि ने अमानवीय ताकतों का निर्मम पर्दाफाश करते हुए मानवीय शक्तियों में चेतना जमाने का प्रयत्न किया है | कविता का शिल्प भी इस संग्रह की कविताओं में अधिक निखर कर सामने आया है | कवि की बिंब योजना स्थितियों के यथार्थ चित्र किट करने में सफल हुई है | समकालीन परिवेश का यथार्थ चित्रं इस संग्रह की प्रमुख उपलब्धि है| एक सजग कलाकार के दर्शन सर्वेश्वर की रचनाओं में होते हैं |किसी वाद या पार्टी-विशेष से मुक्त रहकर उन्होंने अपने समय की समस्याओं का स्वस्थ चित्रं किया है |

संदर्भ :

१. बांस का पुल, पृ. ६२
२. वही (सर्पमुख के सम्मुख पृ. ७२)
३. एक सूती नाव, पृ. ३०
४. कुआनो नदी, पृ. १४
५. वही पृ. ४३
६. वही पृ. ४३
७. जंगलका दर्द, पृ. २०
८. वही पृ. २५
९. वही पृ. २९-३०
१०. वही पृ. ६३